Sem. 2, MJ-3

धूमिल के काव्य का सौन्दर्य/विशेषताएँ

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य के इतिहास में सन् साठ के आस-पास एक चिंगारी जो आग में परिणत होती है, उस चिंगारी का नाम सुदामा पाण्डेय 'धूमिल' है। कविता को कल्पना-लोक से बाहर निकालते हुए समसामयिक यथार्थ से जोड़ने, आम आदमी की पीड़ा, उसके टूटते-बनते सपनों को शब्द देने का काम धूमिल ने किया। उनका तो मानना था कि, "यदि कभी कहीं कुछ कर सकती, तो कविता ही कर सकती है।" उनकी कविताओं में स्वतंत्र भारत की बदहाली, बेकारी, असंतोष, व्यवस्था के प्रति आक्रोश और मोहभंग है।

39 वर्ष की अल्पायु भोगने वाले धूमिल का जीवन अर्थाभाव और मानसिक यंत्रणा का पर्याय था। उनकी अक्षय कीर्ति का आधार पच्चीस कविताओं का संग्रह 'संसद से सड़क तक' है। भय, भूख, अकाल, सत्तालोलुपता, अकर्मण्यता और अन्तहीन भटकाव को आक्रामकता से रेखांकित करनेवाली कविताएँ यहाँ है। उनकी कविताओं के दो अन्य संग्रह — 'कल सुनना मुझे' तथा 'सुदामा पाण्डेय का प्रजातंत्र' हैं।

धूमिल वास्तव में क्रुद्ध पीढ़ी के — मोहभंग के कवि हैं। वर्तमान प्रजातांत्रिक व्यवस्था के प्रति उनका आक्रोश मुखर है— "न कोई प्रजा है/न कोई तंत्र है/यह आदमी के खिलाफ/आदमी का खुला षड्यंत्र है।" उनकी कविताओं में रह-रहकर आम आदमी ही चित्रित हुआ है, जो इस सामाजिक यथार्थ के दुर्लभ दस्तावेज हैं। कवि मानो भीड़ के बीच गायब होते चेहरों का यथार्थ बतला रहा है— "लो, यह रहा तुम्हारा चेहरा, यह जुलूस के पीछे गिर पड़ा था।" 'अकाल-दर्शन' कविता में कवि का प्रश्न है कि भूख कौन उपजाता है। बढ़ती आबादी की ओर इशारा किए कवि उनकी तलाश करता है जो देश के जंगल में भेड़िये की तरह लोगों को खा रहे हैं और शोषित उन्हीं की जयजयकार करने में जुटे हैं। —

"जो आजादी और गांधी के नाम पर चल रहा है
जिससे न भूख मिट रही है, न मौसम बदल रहा है।"

कवि ने आम आदमी के लिए देशभक्ति, क्रांति, संघर्ष जैसे थोथे शब्दों को महत्वहीन माना है। आदमी की तटस्थता और चुप्पी हमेशा घातक होती है किन्तु 'वे इस कदर पस्त हैं/कि तटस्थ हैं।" कवि ने अपनी प्रत्येक कविता के भीतर आदमी की तलाश की है। आज मनुष्य

की सारी हँसी-खुशी खोखली दिखती है। इसीलिए वह "अक्षरों के बीच गिरे हुए/ आदमी को पढ़ो।" की बात करता है। स्वतंत्रता के बाद अमीर और गरीब के बीच की खाई बढ़ती ही गयी है। जीवन का संघर्ष और तनाव आम आदमी को असमय बूढ़ा बनाता जा रहा है। कवि कहता है – "जिस उम्र में/ मेरी माँ का चेहरा/ झुर्रियों की झोली बन गया है/ उसी उम्र की मेरी पड़ोस की महिला/ के चेहरे पर/ मेरी प्रेमिका के चेहरे-सा/ लोच है।"

वास्तव में, स्वतंत्र भारत में हर आम आदमी का स्वप्न था कि हम खुशहाल होंगे; किंतु मजबूरी और शोषण के तले आज का हर मनुष्य पीड़ादायी जीवन जी रहा है। इस स्थिति के विरुद्ध आक्रोश तो पनपता है किन्तु हलक से आवाज ही बाहर नहीं निकलती। – "सभी दुखी हैं/ सबकी वीर्य-वाहिनी नलियाँ/ साइकिलों से रगड़-रगड़ कर/ पिची हुई हैं।" आज का मनुष्य कवि को लगता है कि – "जिसे भी पूँछ उठाकर देखा/ मादा ही पाया।"

मनुष्यता का ऐसा हनन होता देख धूमिल का कवि समाज में व्याप्त असमानता, शोषण, भ्रष्टाचार – सब पर प्रहार करता है। उसका 'मोचीराम' हर व्यक्ति को सिर्फ एक जोड़ी जूता के रूप में देखता है, जो मरम्मत के लिए खड़ा है। उनकी प्रसिद्ध कविता 'रोटी और संसद' आम आदमी की इसी विसंगत स्थिति का सही मूल्यांकन करती है। –

"एक आदमी/ रोटी बेलता है / एक आदमी रोटी खाता है/ एक तीसरा आदमी भी है/ जो न रोटी बेलता है, न रोटी खाता है/ वह सिर्फ रोटी से खेलता है/ मैं पूछता हूँ – 'यह तीसरा आदमी कौन है?'/ मेरे देश की संसद मौन है।"

किन्तु कवि चाहता है आम आदमी अन्याय न सहे, आवाज उठाए। चुप और चीख – दोनों का प्रभाव पड़ता है। उनका मोचीराम इसलिए कहता है कि इंकार से भरी हुई चीख और एक समझदार चुप, दोनों का मतलब एक है।

निश्चय ही, समकालीन कविता के प्रमुख आधार-स्तंभ धूमिल ने हिन्दी कविता को आम आदमी के हथियार के रूप में प्रयुक्त किया है। बिना किसी अलंकार के सपाटबयानी करती उनकी कविताओं में संवादात्मकता और व्यंग्यात्मकता भरी पड़ी है। वे बार-बार आदमी की कमजोरियों पर उंगली रखकर उसे चेताने की, खड़े होने की सामर्थ्य देना चाहते हैं।